दिगम्बर जैन श्री पार्श्वनाथ जन्मभूमि मन्दिर भेलूपुर, वाराणसी का ऐतिहासिक परिचय

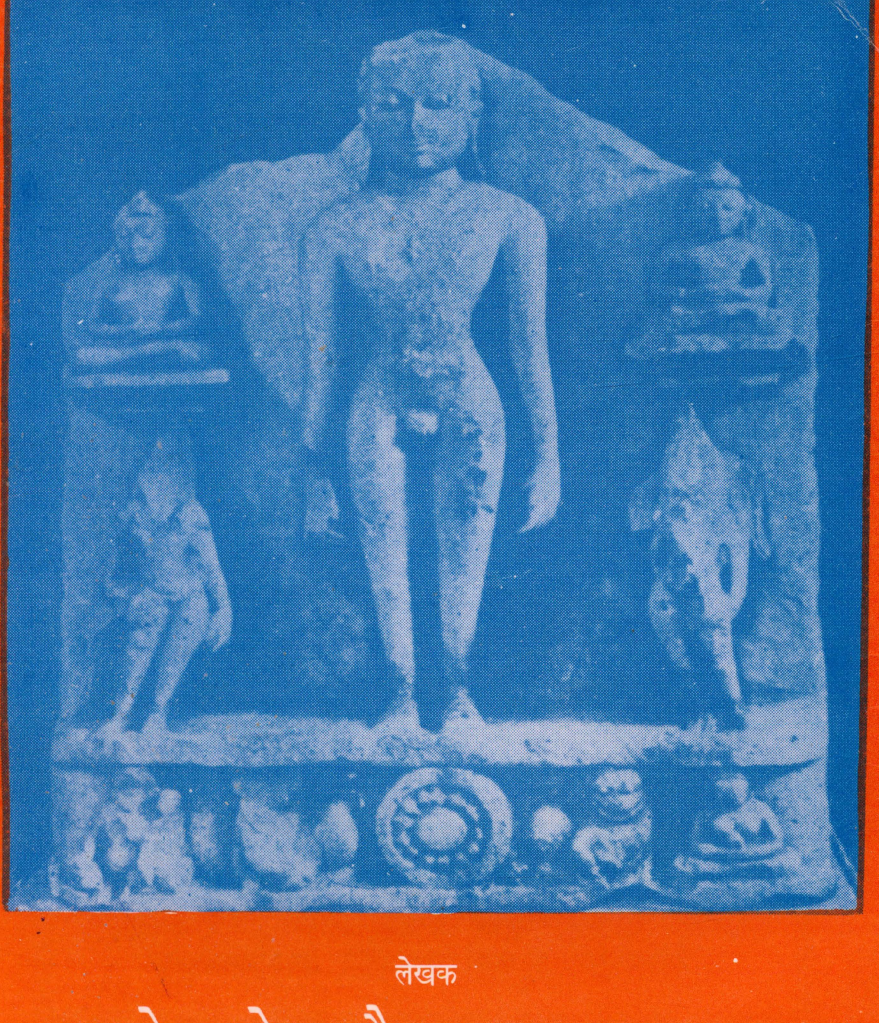

लेखक

सत्येन्द्र मोहन जैन बी.एस सी., बी. ई., एम. ई.

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दिगम्बर जैन श्री पार्श्वनाथ जन्मभूमि मन्दिर भेलूपुर, वाराणसी का ऐतिहासिक परिचय

लेखक

सत्येन्द्र मोहन जैन वी.एस सी.,बी.ई.,एम.ई.

प्रकाशक [redacted]

देवाधिदेव श्री १००८ पार्श्वनाथ मानस्तम्भ

पंचकल्याणक महोत्सव भेलूपुर, वाराणसी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भूमिका :

यह है दिगम्बर जैन मंदिर भेलूपुर का इतिहास। इस मन्दिर व साथ के परिसर मे स्थित धर्मशालयें बनाने में ई. सन् १९८८ से ई. सन् १९९५ तक ७५ लाख रूपया व्यय हो चुका है। अब बीस से २५ दिसम्बर १९९६ को मन्दिर के प्रमुख दरवाजे के सामने से थोड़ा दाँये तरफ निर्मित मान स्तम्भ का पंचकल्याणयक महोत्सव मनाया जा रहा है। मन्दिर व धर्मशाला निर्माण हेतु धन दिगम्बर जैन समाज काशी ने लगाया। केवल मात्र रू. २५,०००।- उत्तरांचल तीर्थ क्षेत्र कमेटी से प्राप्त हुआ था। दानशीलता का उत्कृष्ट नमूना है यह।

दुमंजिले पर स्थित मन्दिर मानस्तम्भ व धर्मशाला कोई कला निधि ना भी हो परन्तु भवन की महानता के साथ-साथ इसका महान इतिहास है। इसका इतिहास भारत के दूसरे जैन मन्दिारों से भिन्न व अनूठा है।

ई. पूर्व ८७७ में भगवान पार्श्वनाथ का जन्म काशी में हुआ। हमारे गुरू एवं समाज अर्से से ऐसा मानती आई है कि यह मन्दिर उनके जन्म स्थान पर निर्मित है। किन्तु हमें तो इस कथन को यहाँ के ईंट पत्थरों से सुनना है। ।

बनारस में दिगम्बर जैन मन्दिरों का निर्माण

उपलब्ध दिगम्बर जैन मंदिरो का इतिहास १८५६ ई. से प्रारम्भ होता है। बनारस के रहने वाले लाला प्रभूदास आरा रहने लगे व उन्होंने चन्द्रपरी व भदेनी घाट में मंदिरों का निर्माण किया। उनके पुत्र बाबू देव कुमार ने १८५६ में प्रतिष्ठा कराई [१]।

ई. सन् १८६८ में एक नये सितारे का उदय हुआ। श्री खड्गसेन उदयराज ने न्यायलय में खड्ग उठाई। प्रहार किया महाराज विजयनगरम् की रियासत पर। उन्होंने मुकदमा लड़ा व जीत गये[२] । महाराज से भूमि प्राप्त हो गई व उन्होंने एक नया जन्मभूमि मंदिर भेलूपुर में निर्मित किया। उनके तर्क क्या थे जिसके कारण महाराज को भूमि देनी पड़ी यह अवश्य रोचक विषय है परन्तु इस लेख के लेंखक को उस मुकदमे का कुछ भी विवरण उपलब्ध न हो सका।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

फिर बारी आई बाबा छेदीलाल की। उन्होंने भदेनी घाट पर उस स्थान पर जहाँ कि चरण बने थे एक मंदिर स्थापित करके १८९५ प्रतिष्ठा कराई[३]।

एक मंदिर सारनाथ में बना जिसमें सन् १८२४ की पभोसा में प्रतिष्ठित काले पाषाण की प्रतिमा विराजमान है। सारनाथ से सातवीं शताब्दी ई. की निकली मूर्ति का चित्र, मुख्य पृष्ठ पर, जिसकी कायोत्सर्ग व ध्यान मुद्रा देखते बनती है।

लगभग इसी समय मैादागिन के प्रमुख चौराहे पर लाला बिहारी लाल जैन ने एक विशाल मंदिर व विशाल धर्मशाला अपनी पूरी सम्पत्ति लगा कर बनवा दी। सम्पत्ति के दान का अनोखा उदाहरण उन्होंने उपस्थित किया।

एक भाट की गली में चैत्यालय स्थापित किया गया जो अनोखा था अपनी हीरे की बहुमूल्य मूर्ति के लिये, जो मूर्ति अपनी ख्याति के कारण बाद में चोरों द्वारा लूट ली गयी। इस चैत्यालय को आज तक सुरक्षित रखने वाले श्री संतोष कुमार जौहरी ने बताया कि यह चैत्यालय लगभग १०० वर्ष पूर्व स्थापित हुआ था।

बहुत से जैन विद्यार्थी विद्या अध्ययन को बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में आते थे। उनकी धर्म भावना को अक्षुण रखने हेतु श्री ज्योति राम बैजनाथ सरावगी ने कलकत्ता से आकर नरिया में भूमि क्रय की। मंदिर के लिये धन श्री सेठ स्वरूप चंद हुकुम चंद इन्दौर वालों से प्राप्त किया व स्वयं सरावगी जी ने महावीर स्वामी की विशाल मूर्ति स्थापित की।

एक मंदिर खोजवाँ में नगर ग्राम जो वरूणा के किनारे था, जो अब वाराणसी शहर में आ गया है, से आये जैन परिवार ने स्थापित किया था जिसे श्री धर्म चन्द्र जैन ने इस शताब्दी के प्रारम्भ में पक्का कराया व बाद में समाज ने इस मंदिर का पुनः निर्माण दिनांक २९-८-९४ में कराया। एक मन्दिर ग्वालदास साहू लेन, बुलानाला पर था जो समाज ने ई. सन् १९६३ में श्री मकसूदन दास की अध्यक्षता में व श्री विजय कृष्ण उपनाम खच्चूबाबू के प्रधान मंत्रित्व काल में पुनः निर्माण कराया। बुलानाला का यह मंदिर पंचायती मंदिर कहलाता है। उसमें से प्राप्त एक खंडित मूर्ति (चित्र २२) बनावट के आधार पर लगभग १० वीं शदी की है। ललिता घाट पर सड़क के किनारे एक मूर्ति वैष्णव मंदिर की दिवार में जड़ी है (चित्र २३) जो श्री गणेश प्रसाद जैन ने लेखक को दिखाई। इस मंदिर जिसका यह वर्णन है का पुनः निर्माण १९९० में बाबू ऋषभ दास की अध्यक्षता में तथा श्री खच्चू बाबू के प्रधान मंत्रित्व काल में हुआ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वाराणसी जनपद के कस्बों व गावों में जैन धर्म :

धनन्जय ग्राम जो अब विश्वविद्यालय मैं है, के जैन अब सुन्दरपुर में आबाद हैं। बछांव ग्राम में एक घर है, वाराणसी इलाहाबाद मार्ग पर साहिबाबाद ग्राम में एक दिगम्बर जैन मंदिर श्री बिन्द्रा प्रसाद ने दिनांक ६-८-८४ में स्थापित किया। गंगापुर ग्राम में पाँच घर हैं व एक चैत्यालय है। हाथी गाँव में २५ जैन घर है व प्रतापगढ़ के डा. राम कुमार जैन ने नये मन्दिर दिनांक ७-३-१९९५ को मंदिर की प्रतिष्ठा कराई है।

भेलूपुर में मूर्तियों की अधिकता बतलाती है कि यहाँ बहुत से गाँवों में जैन धर्म था। कुछ गाँव शहरी करण की चपेट में आकर उखड़ गये व कुछ गाँवों से व्यवसाय की तलाश में जैन परिवार बाहर चले गये। वो लोग अपनी मूर्तियाँ भेलूपुर देते रहे। भेलूपुरा के मंदिर में इस समय ४६ मूर्तियां हैं दो पद्मावती देवी की मूर्तियां हैं। एक सिद्धों की आकृति है। यहाँ से दो मूर्तियाँ नरिया जैन मंदिर में ई. सन् १९८१ में ले जाई गयीं। दो मूर्तियां सारनाथ इस शताब्दी के छठें दशक में गईं [२]।

क्षेत्रपाल की मान्यता जैन देवकुल में ११वीं शताब्दी से हुई [४] इस मन्दिर में क्षेत्रपाल भी आठ क्षेत्रपालों का समूह प्रतीत होता है। इससे भी स्पष्ट है कि जगह-जगह से मन्दिर उठ कर यहां आए होगें।

जैन साहित्य में वाराणसी :

प्रोफेसर सागरमल ने अपनी पुस्तक पार्श्वनाथ जन्म भूमि मन्दिर, वाराणसी का पुरातत्त्वीय वैभव में बताया है कि वाराणसी नगरी का वर्णन निम्न जैन साहित्य में है - प्रज्ञापना, ज्ञाताधर्मकथा, उत्तरध्ययन चूर्णी, कल्पसूत्र, उपासक दशांग, आवश्यक नियुक्ति, निरयावलिका तथा अन्तकृद्दशा ।

भारत के दिगम्बर जैन तीर्थ ने लिखा है कि वाराणसी का वर्णन तिलोयपणति, उत्तरपुराण,आचार्य पद्मकीर्ति कृत पासणाउ चरित्र, वादिराजसुरि कृत पार्श्वनाथ चरित्र तथा ब्रहमचारी नेमी दत्त कृत आराधना कथा कोष में है।

इन सब पुस्तकों में वाराणसी से समबन्धित कुछ आख्यान अथवा श्री पार्श्वनाथ स्वामी के जीवन में वाराणसी का वर्णन है, वाराणसी में जैन धर्म का कर्मिक इतिहास अथवा भेलूपुर के इस मन्दिर का कर्मिक इतिहास नहीं है ।

राजघाट के अवशेष :

राजघाट में खुदाई में पुराने जैन मन्दिर के अवशेष प्राप्त हुये। यहाँ से प्राप्त सबसे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्राचीन जैन मूर्ति छठी शताब्दी की भगवान महावीर की है । पार्श्वनाथ की राजघट से प्राप्त सबसे प्राचीन मूर्ति आठवीं शदी ई. की है जो राजकीय संग्रहालय लखनऊ में है ।

भेलूपुर के मन्दिर निर्माण की पृष्ठ भूमि :

यहाँ के मन्दिर की फोटो व मध्य एंव दायें वेदी की फोटो जो ई. सन् १९८९ में ली गई है, श्री सुनील कुमार जैन के सौजन्य से प्राप्त हुई जो क्रमांक १,३ व ४ पर है । मध्य की वेदी की फोटो ई. सन् १९७४ में छपी,एवं ई. सन् १९७१ के लगभग ली गई, भारत के दिगम्बर जैन तीर्थ से लेकर क्रमांक २ पर दी जा रही है । श्री वीरेन्द्र कुमार जैन की स्मृति में ३० वर्ष पूर्व परन्तु उपरोक्त चित्र २ व ३ की तुलना करने से वर्ष १९७१ ई. के बाद ई. सन् १८२४ में पभोंसा पर्वत पर प्रतिष्ठित काले पाषाण की पार्श्व प्रभू के मूर्ति के चमत्कार से प्रभावित होकर, इस काले पाषाण की मूर्ति को मुख्य वेदी के मुख्य स्थान पर स्थापित किया गया। पूर्व में इस स्थान पर स्थापित सफेद पाषाण की पार्श्व प्रभू की मूर्ति अब दायें तरफ की वेदी में स्थापित है।

मुख्य मंदिर के बाहर आंगन के अन्दर क्षेत्रपाल की वेदी थी जिसकी ई. सन् १९८९ को फोटो क्रमांक ५ पर श्री सुनील कुमार जैन के सौजन्य से संलग्न है। यह मन्दिर खूबसूरती से पेन्टेड था परन्तु छोटा था। नेपाल राज्य की कोई रानी वाराणसी रहती थी वो जैन धर्म से प्रभावित थीं। उन्होंने इस मंदिर की तीन वेदी में से एक पर संगमरमर लगाया था। चित्र १ में दिखने वाली दिवार आंगन की दिवार है जो पुरानी है। दिगम्बर व श्वेताम्बर भूमि बंटवारा होने के पश्चात इस दिवार में, चित्र में दिखने वाला उत्तराभिमुखी दरवाजा व सीढ़ियां बनाई गई पूर्व में इस आंगन में पूर्वाभिमुखी दरवाजे से प्रवेश होता था। नवनिर्माण की आकांक्षा से इस मन्दिर का आमूल तोड़कर ई. सन् १९८९ में क्षमावार्णी के दिन नये मंदिर की नींव रखी गयी एवं दीपावली ई. सन् १९९० में इस नवनिर्मित मंदिर में समारोह पूर्वक मूर्तियाँ स्थापित कर दी गयीं।

पुराना मंदिर मिट्टी के ऊँचे टीले पर निर्मित था। इस मन्दिर की कुर्सी की ऊँचाई लगभग मौजूदा मन्दिर के प्रथम तल तक थी। यह सब कुर्सी तोड़कर बाहर फेंकी गई तो नीचे नींव में काफी पुरातात्विक सामग्री प्राप्त हुई। उसमें से जो भी पत्थर खुदा हुआ था उसे रख लिया गया व शेष ईंट पत्थर नये मन्दिर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

में दबा दिये गये । इसी कारण हमें न केवल मूर्ति खण्ड बल्कि वेदी के खण्ड भी प्राप्त हैं ।

श्री ऋषभ दास ने बताया कि पुरानी नींव में एक के आगे एक तीन नींव के अवशेष थे । तीनों पर पलास्टर भी अलग-अलग रंग का था । उससे यह स्पष्ट है कि मन्दिर दो दफा पूर्व में तोड़ा गया व प्रत्येक बार पुनः निर्मित मन्दिर पुराने मन्दिर की नींव तोड़ कर नहीं इसके बराबर में दूसरी नींव की दीवार बनाकर बनाया गया । श्री जय कृष्ण एवं श्री चन्द्र भान ने बताय कि जो मिट्टी हटी उसकी तीन परत थीं सबसे ऊपर की परत लगभग तीन फिट ऊँची थी जिसमें ईट इत्यादि का चूरा था। दूसरी परत लगभग तीन फिट ऊँची साफी की व तीसरी परत और हटाई गई । परत १ व २ के बीच व २-३ के बीच सख्त मिट्टी का फर्स था । परत ३ व मौजूदा जमीन के बीच कुछ नहीं था अर्थात परत ३ पृथ्वी का अंग मात्र थी । यह मिट्टी मौजूदा श्वेताम्बर मन्दिर व दिगम्बर मन्दिर के बीच के रास्ते में भी फैली थी । पुरातात्विक अवशेष भूमि में नीव खोदते समय लगभग दो या ढाई फिट मौजूदा मिट्टी के स्तर से नीचे मिले।

एक खड्गासन प्रतिमा भी प्राप्त है । श्री प्रकाश चन्द्र जैन पुजारी ने बताया कि उस मन्दिर के तलघर के तहखाने में यह खडगासन मूर्ति थी । कुछ अन्य ने इस मिट्टी में दबी हुई बताई है।

गोलाकार दीवार व उस गोले में मध्य से किरणों जैसी शक्ल की दीवार की मौजूदगी किसी ने नहीं बताई है । इस प्रकार दीवारें दिखाई देती हैं अगर गोलाकार स्तूप के अवशेष होते है । इस पृष्ट भूमि में वहाँ के अवशेषों का निरीक्षण करने से मूर्तियाँ देव, कुलिका के ऊपर का पत्थर, मन्दिर के लगे हुए स्तम्भ एवं मन्दिर में उपयुक्त हवादान आदि मिलते हैं । यह भी आश्चर्य है कि किस प्रारिस्थितियों में पुरानी खण्डित मूर्तियाँ मन्दिर की नींव में दबा कर रखी गयी थीं। परम्परा यह थी कि पुरानी खण्डित मुर्तियों को विसर्जित कर दिया जाता था।

हम इतिहास में पाते हैं कि ई. सन् ११९४ में कुतुबुद्दीन ऐबक ने बनारस के मन्दिरों को लूटा एवं ई. सन् ११९७ में पुनः लूटा [६] । एवं तत्पश्चात मुसलमान अधिकारियों की सख्ती के कारण कुछ दशक तक मन्दिर पुनः न बन पाये ७ । यह ही वह परिस्थिती हो सकती है जब की खण्डित मूर्तियाँ मन्दिर के मलवे में दबी रह गई एवं पुनः कुछ दशक तक उन्हें निकाला नहीं गया । अन्यथा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

किसी दूसरी विपत्ती एवं दूसरे कारण से मूर्ति खण्डित होती तो खण्डित मूर्तियॉ विसर्जित की गई होतीं । हम इस निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं कि पहला मन्दिर कुतुबुद्दीन ऐबक ने सन् ११९४ ई. में तोड़ा व कुछ दशक तक उनके अधिकारियों ने पुनः बनने नहीं दिया तत्पश्चात् पुनः निर्माण के समय भी दहशत बनी हुई थी उससे पुरानी मूर्तियाँ विसर्जित करने का अवसर नहीं मिला व वो सब नीव में ही दबी रह गईं।

पहले समय में बेदी के नीचे कलश, यंत्र, सिक्के आदि रखे जाते थे । जो बाद में प्रमाणित इतिहास बनाने मे समर्थ होते थे । लोहानी पुर में मौर्य युगीन जैन मर्तियों के साथ मौर्य युगीन सिक्का भी मिला जिससे इस मूर्ति का इतिहास प्रमाणिक रूप से सिद्ध है । यहाँ पर मूर्ति के प्राप्ति स्थान के नीचे व पास में कलश व सिक्के खोजने का प्रयत्न किया गया सो कहीं नहीं मिला । कुतुबुद्दीन की सेना ने मन्दिर लूटने की नीयत से तोड़े । उसके सैनिकों ने अवश्य ही वेदी उखाड़ कर कलश जिसमें प्रायः स्वर्ण व रजत् सिक्के भी होंते थे लूटा होगा।

यहाँ से प्राप्त मूर्तियों का अध्ययन- प्रो. सागरमल जैन ने अपनी पुस्तक पार्श्वनाथ जन्म भूमि मन्दिर, वाराणसी का पुरातात्त्वीय वैभव में बड़े सुन्दर व विचारात्मक तरीके से लिखा है । यहाँ हम मूर्तियों के साथ-उन दूसरे अवशेषों की विवेचना भी करेगें जो वहाँ से प्राप्त हुये हैं व उनके आधार पर इस मन्दिर का इतिहास पिरोयेंगे ।

प्राप्त अवशेषों का अध्ययन :

१- इन सब अवशेषों में सबसे प्राचीन एक स्तम्भ का भाग है जिसमें चारो तरफ तीर्थकरों की मूर्तियाँ बनी हैं । यह चित्र ६ पर प्रदर्शित है यह स्तम्भ प्रो. सागरमल द्वारा लगभग चतुर्थ शताब्दी ई. का बतलाया गया है । यह स्तम्भ किसी मानस्तम्भ का शीर्ष भाग है । ऊपर व नीचे दोनों ओर पत्थर टूटा हुआ स्पष्ट है । इस स्तम्भ में तीन मूर्तियाँ ऋषभ, पार्श्व व महावीर की उनके लांछन से निर्विवादित पहचानी गयी हैं । चौथी मूर्ति चित्र ७ के नीचे कमल उसी प्रकार बना है जैसे अन्य मूर्तियों में ऋषभ, सर्प व शेर बना है । यह चौथी मूर्ति पद्मप्रभू भगवान की मानी जानी चाहिए । उपरोक्त पुस्तक में इसे अरिष्टनेमी की मूर्ति कहा है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

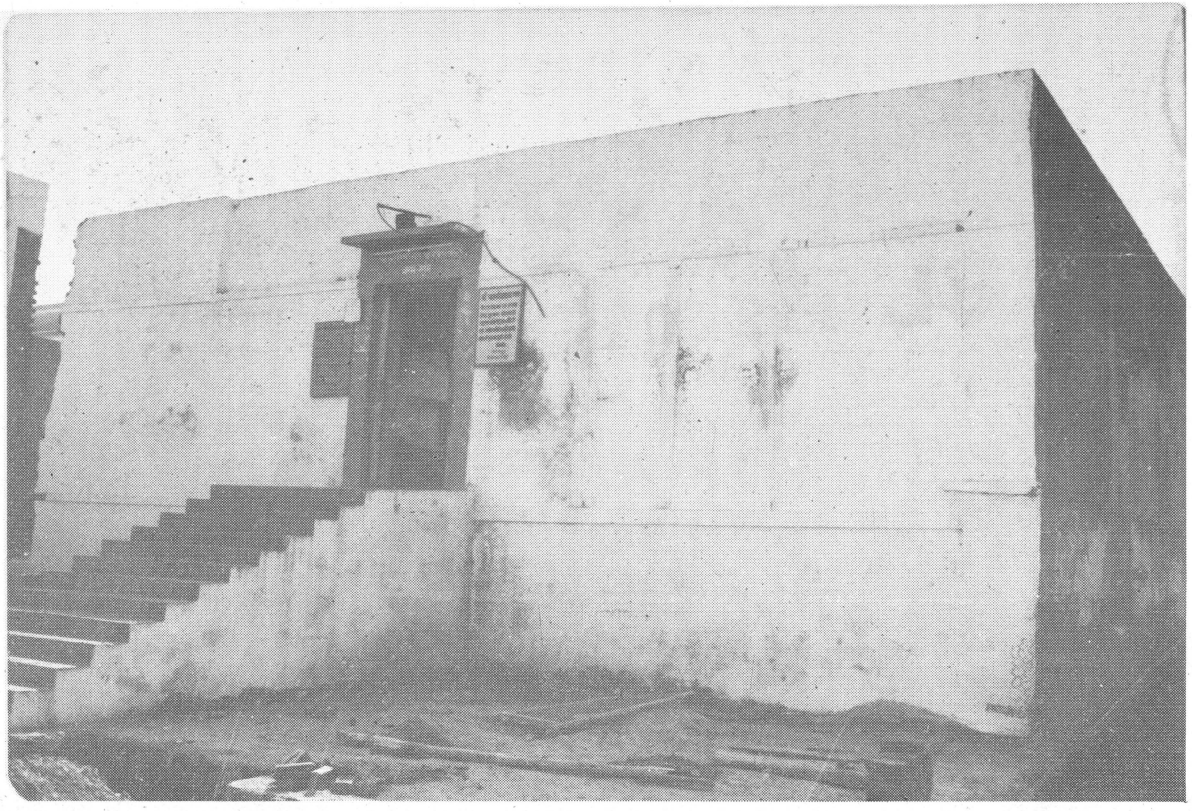

चित्र-१ - मन्दिर १९८९ ई.।

Jain Education International
For Personal & Private Use Only
www.jainelibrary.org

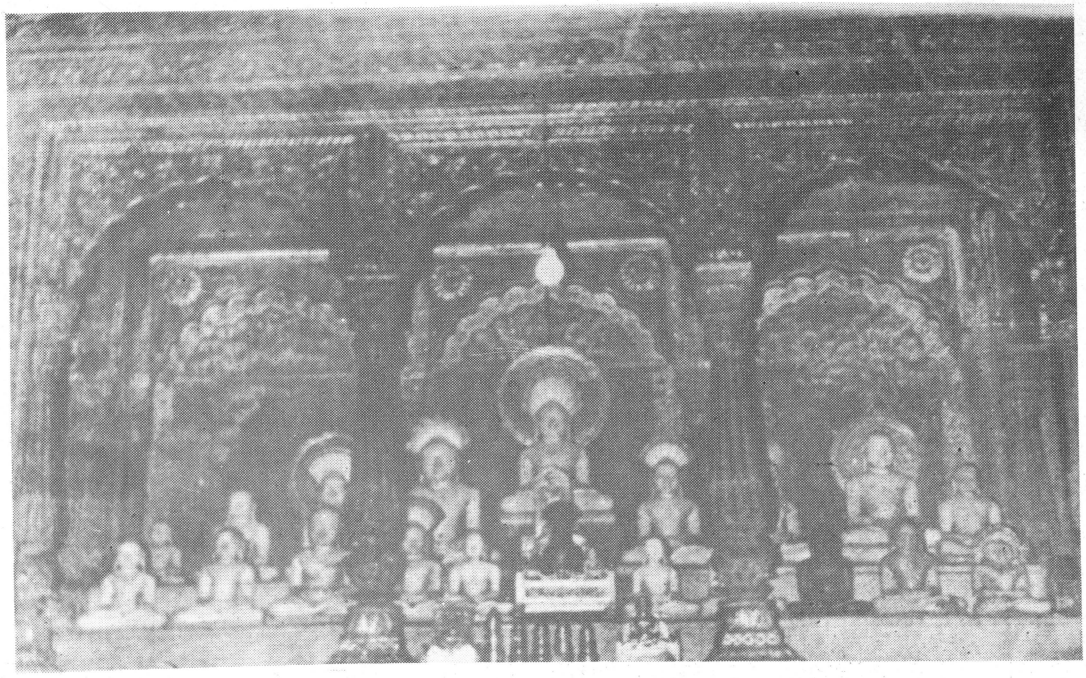

चित्र-२ - मध्य वेदी १६७१ ई.।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-३ - मध्य वेदी १९८९ ई.।

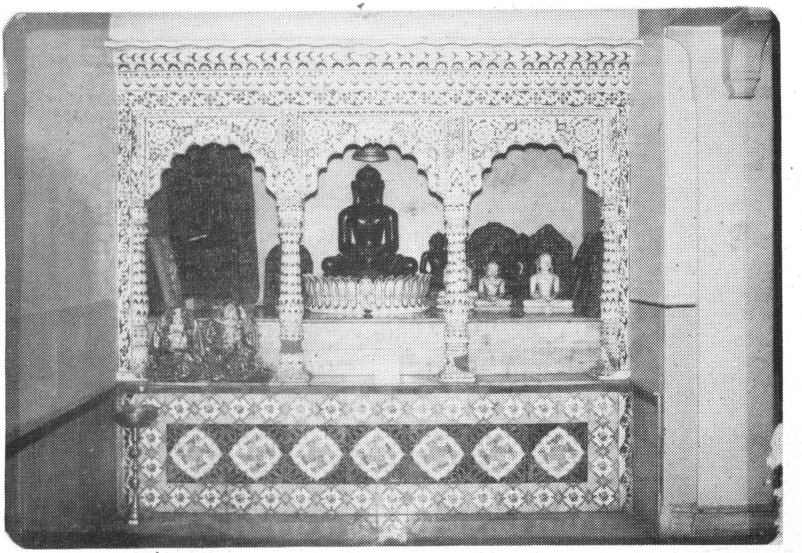

चित्र-४ - दाई वेदी १९८९ ई.।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

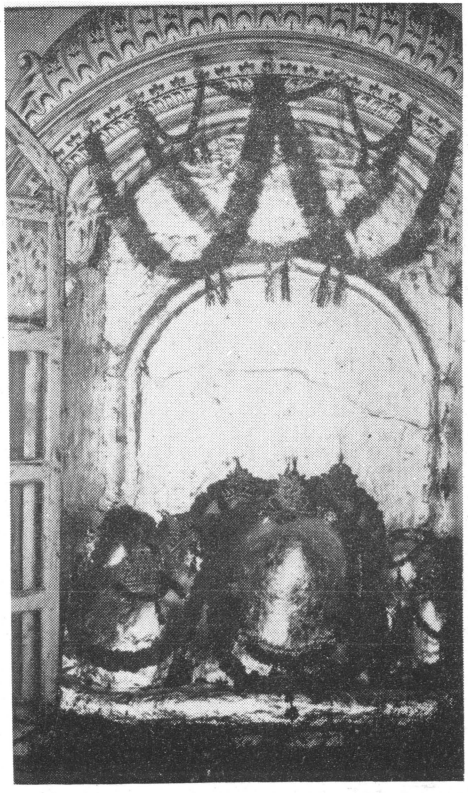

चित्र-५ - क्षेत्रपाल १६८६ ई.।

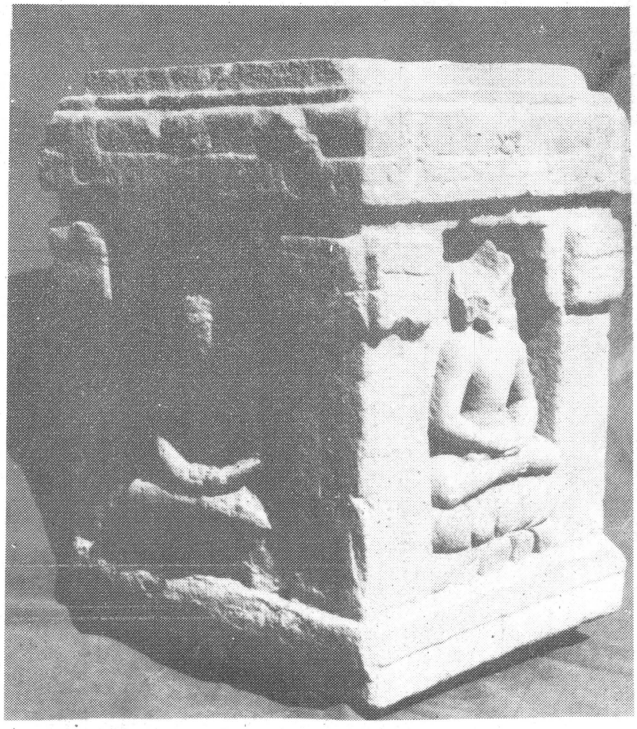

चित्र-६ - स्तम्भ लगभग चौथी शदी ई.।

Jain Education International
For Personal & Private Use Only
www.jainelibrary.org

Jain Education International

For Personal & Private Use Only

www.jainelibrary.org

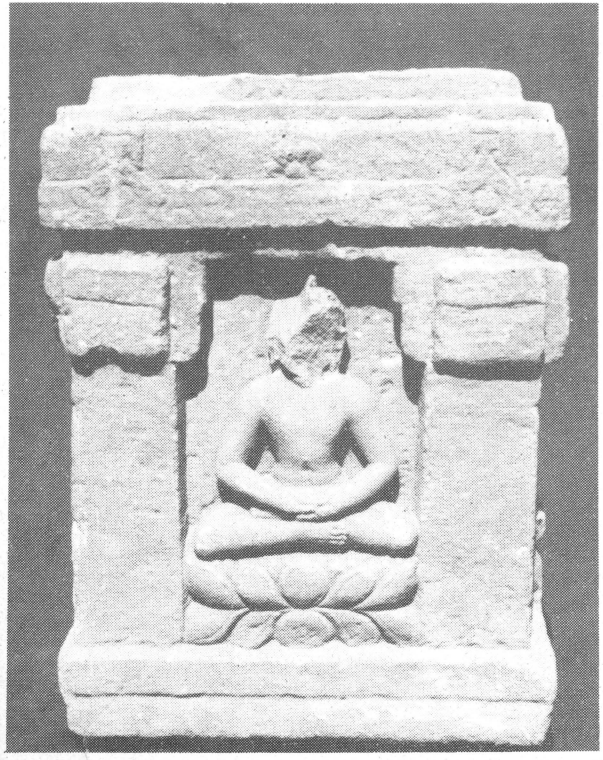

चित्र-७ - स्तम्भ के पद्मप्रभु।

चित्र-८ - प्रथम मन्दिर की मुख्य मूर्ति।

Jain Education International
For Personal & Private Use Only
www.jainelibrary.org

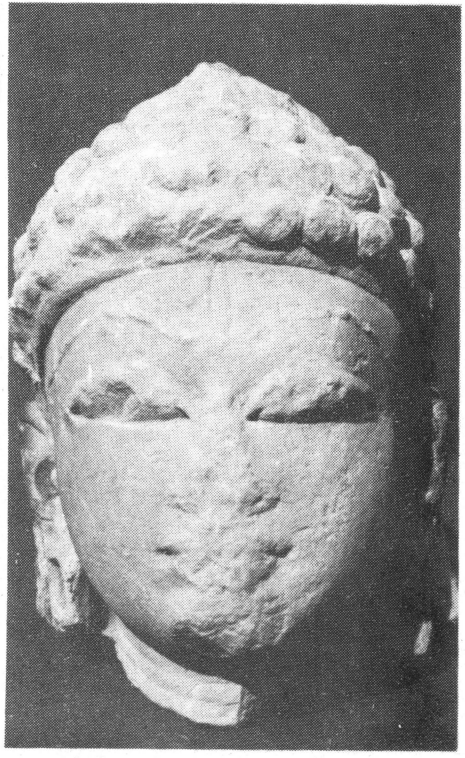

चित्र-११ - चित्र ८ का मस्तक।

चित्र-१० - चित्र ६ के उपर देव।

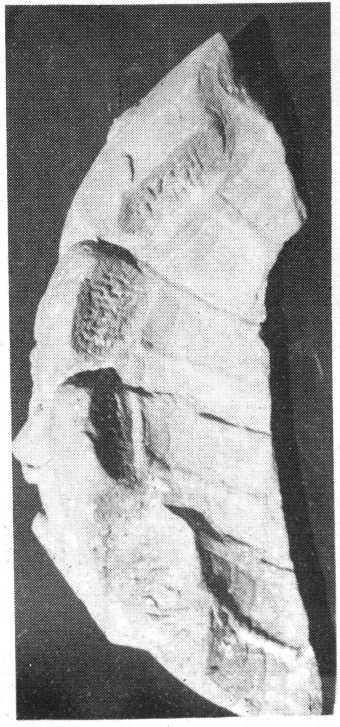

चित्र-६ - चित्र ८ की फणावली।

चित्र-१२ - चित्र ८ की वेदी के सामने का पत्थर।

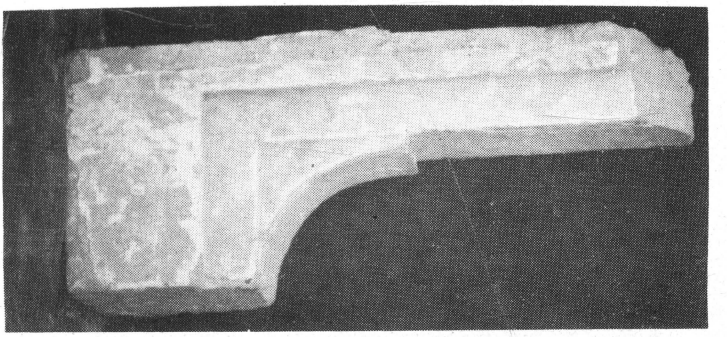

चित्र-१३ - चित्र ८ की वेदी के पीछे का पत्थर।

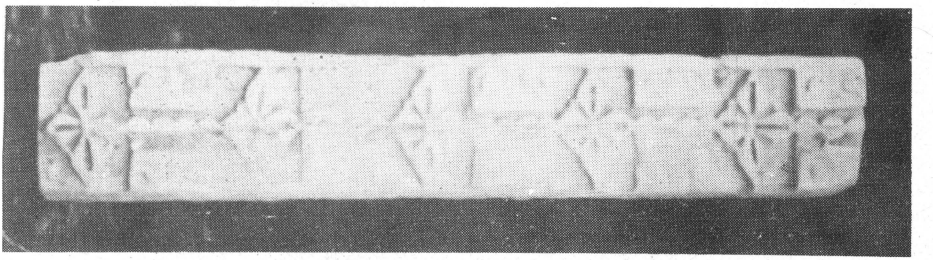

चित्र-१४ - चित्र ८ की वेदी के उपर का पत्थर।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

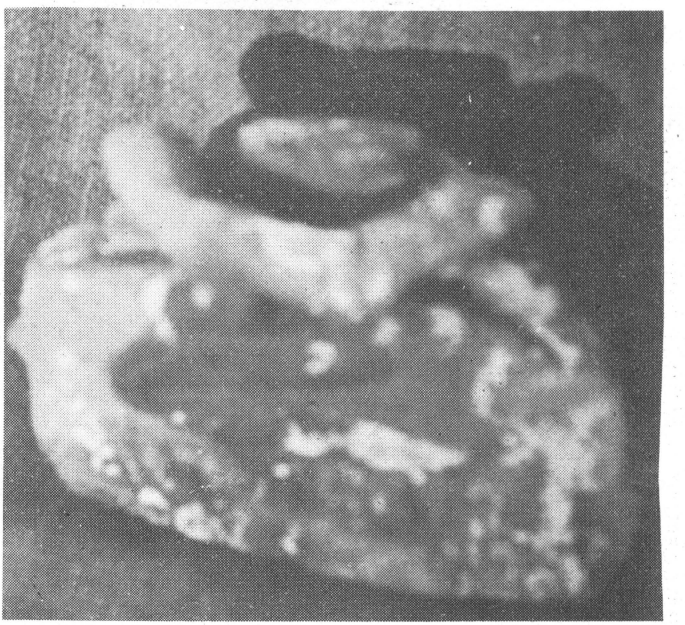

चित्र-१५ - दूसरी मूर्ति लगभग चौथी शदी।

चित्र-१६ - चित्र १५ की वेदी का शीर्ष।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चित्र-१७ - शान्तिनाथ लगभग छठी शदी।

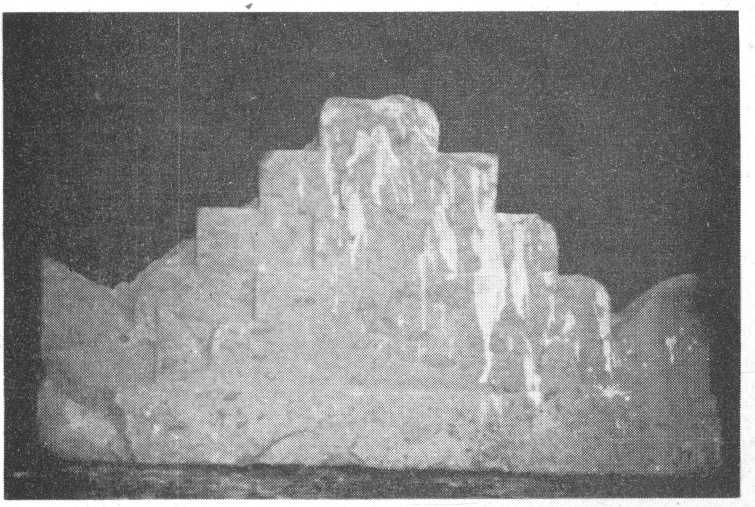

चित्र-१८ - चित्र १७ की वेदी का शीर्ष।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

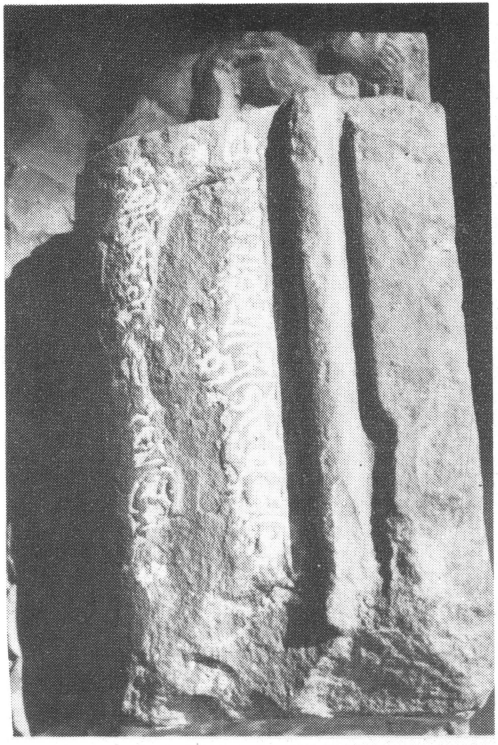

चित्र-१६ - शिलालेख नौवीं शदी।

चित्र-२० - अभिलिखित मूर्ति १३ वीं शदी।

Jain Education International
For Personal & Private Use Only
www.jainelibrary.org

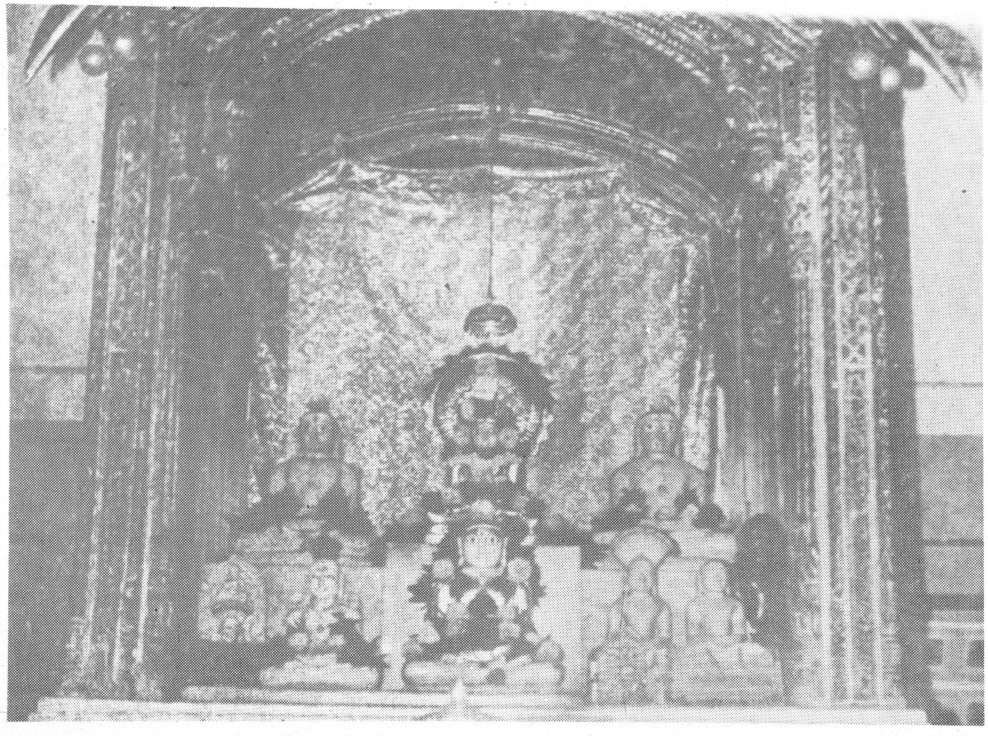

चित्र-२१ - दूसरे मन्दिर की वेदी १९७१

Jain Education International
For Personal & Private Use Only
www.jainelibrary.org

चित्र-२२ - पंचायती मन्दिर से प्राप्त मूर्ति।

चित्र-२३ - ललिताघाट की मूर्ति।

Jain Education International
For Personal & Private Use Only
www.jainelibrary.org

२- पार्श्वनाथ की खण्डित प्रतिमा (चित्र ८) को उपरोक्त वर्णन में ५ वी या ६ वी शताब्दी ई. की कही गई है । इस मूर्ति के ऊपर के सप्तफनी सर्प के छत्र का आधा भाग भी यहाँ उपलब्ध है जो चित्र ९ पर है । दूसरी तरफ की फणावली खण्डित है। इस फणावली के ऊपर जो देव बने है वह चित्र १० पर है । यह देव फणावली के देव धरणेन्द्र के सहयोग से पार्श्व प्रभू की सेवारत लगते हैं, उपसर्ग मुद्रा में नही हैं । इस प्रकार तीर्थकारों के साथ मालाधारी व्योमचारी देव प्रदर्शित होते हैं इस कारण इसे भी मालाधारी देव माना जाना चाहिए।

एक मस्तक, जिसकी उँचाई २४ से.मी. गले के साथ है, भी यहाँ पर उपलब्ध है जो चित्र ११ पर दिखाया है । पद्मासन मूर्ति के धड़ की ऊंचाई ६२ से.मी. है एवं मूर्ति की चौड़ाई ८० से. मी. है । यह मस्तक अनुपात के हिसाब से इसी मूर्ति का लगता है। इसके मस्तिष्क पर दो खड़ी धारियाँ इस प्रकार बनाई गयी हैं, जैसे त्रिनेत्र हो । जैन सिद्धान्त में तीर्थंकर के त्रिनेत्र होने की मान्यता नहीं है यह शिव का अनुकरण है ।

इस मूर्ति हेतू देवकुलिका के भाग भी यहाँ प्राप्त हैं । चित्र १२ पर देवकुलिका के सामने व ऊपर का पत्थर है । इसकी चौड़ाई ८७ से.मी. है, जबकि मूर्ति की चौड़ाई ८० से.मी.है। चित्र १३ पर देवकुलिका के पीछे का ऊपर का पत्थर है । इस पर सफेद चूने का लेप स्पष्ट है । चित्र १४ में इन दोनो के ऊपर का पत्थर है । इसकी चौड़ाई ९१ से.मी. है । इस प्रकार इस मूर्ति का स्पष्ट आकलन सम्भव है । इस मूर्ति के वक्ष स्थल पर श्रीवत्स का स्थान खण्डित नहीं है। वह श्रीवत्स रहित है। इन सब बातों से अनुमान है कि यह मूर्ति भी उपरोक्त स्तम्भ के समान लगभग चौथी शताब्दी की होनी चाहिए । यह मूर्ति इस मन्दिर की मुख्य मूर्ति रही है । इसकी कुल ऊँचाई लगभग १४० से. मी. एवं पद्मासन भगवान की ऊचाई ८८ से.मी. रही है ।

३- यहाँ से एक और पद्मासन में छोटी मूर्ति प्राप्त हुई जिसे चित्र १५ पर देखा जा सकता है । यह कटिप्रदेश के ऊपर खण्डित एवं विलुप्त है । इस मूर्ति की चौड़ाई केवल १५ से.मी. है । चित्र १६ पर एक देवकुलिका का शीर्ष भाग दिखाई दे रहा है जिसकी चौड़ाई २५ से. मी. है । लगता है इस देवकुलिका में यह मूर्ति विराजमान थी । देवकुलिका एवं मूर्ति को देखकर इसे प्रमुख मूर्ति के समय का अर्थात चौथी शताब्दी ई. का अनुमान है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अब तक के तथ्यों से यह स्पष्ट हुआ कि ईसा की चौथी शताब्दी में यहाँ एक मन्दिर निर्माण हुआ जिसमें दो वेदियाँ थीं एवं दो ही मूर्तियाँ थी एवं एक मानस्तम्भ था । यहाँ पर चन्दन व केशर घिसने का पत्थर ५० से. मी. व्यास का एवं एक चन्दन व केशर रखने का पत्थर का अर्धगेंदाकार वर्तन ३० से. मी. व्यास का उपलब्ध हुआ है, जिससे विदित होता है कि यह बहुमान्य मन्दिर था। काफी लोग दर्शन व पूजा हेतु यहाँ आते थे ।

४- एक और पद्मासन मूर्ति का धड़ है जो यहाँ से प्राप्त हुआ । यह चित्र १७ पर प्रदर्शित है । यह मूर्ति ३५ से. मी. चौड़ी है । चित्र १८ पर एक वेदी का शीर्ष का पत्थर दिखाया गया है जिसकी चौड़ाई ४७ से.मी. है। प्रो.सागरमल ने इस मूर्ति को ६वीं शताब्दी का माना है यह वेदी व यह मूर्ति छठी शताब्दी में इस मन्दिर में बनाई गई होंगी ।

५- एक अभिलेख एक स्तम्भ के शीर्ष पर लिखा हुआ प्राप्त हुआ जो प्रो. सागरमल ने निम्न पढ़ा-

पंक्ति १-ऊँ (महा) राजश्री भोजदेव मनि

पंक्ति २-क

पंक्ति ३-टूट श्री कच्छम्(वी?) - (लं?)कारित ।

इस भोजदेव को प्रो. साहब ने प्रतिहार वंशीय कन्यकुब्ज के राजा भोजदेव माना है, जिसका राज्य काल ईशा पूर्व ६वीं शताब्दी था। इसे उन्होंने मन्दिर का जीर्णोद्धार काल कहा। उपरोक्त विवरण से यह सही बैठता है। निर्माण के ५०० वर्ष बाद मन्दिर में बृहत जीर्णोद्धार की आवश्यकता पड़ी होगी ।

यह अवशेष भी शेष सब अवशेषों के साथ पुराने मन्दिर के दायें छोर की नीव से प्राप्त हुआ है । उपरोक्त से यह निष्कर्ष निकलता है कि यह लेख कुतुबुद्दीन ऐबक को ई. सन् ११९४ की तोड़-फोड़ से पहला होना चाहिए जो प्रो साहब के निर्णय के समर्थन में है ।

६- एक खड्गासन मूर्ति भी प्राप्त हुई जो चित्र २० पर है । इस मूर्ति के लेख को प्रो. सागरमल के उपरोक्त लेख के बाद ई. सन् १९९६ में मेरे अनुरोध पर निम्न प्रकार पढ़ा है -

पंक्ति १- जयपतिः अ- र -

पंक्ति २- -----। -----

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लिखाई के आधार पर यह मूर्ति ईसा की १३ वीं शताब्दी की है । इस प्रकार यह सही प्रतीत होता है कि यह मूर्ति तहखाने से मिली, मन्दिर के नीचे नीव से नही । यह अवश्य ही पुनः निर्माण के समय बनाई गयी होगी । जो सम्भवतः मन्दिर के दूसरे विध्वंश में खण्डित हुई।

७- यहाँ से कुल ४० अवशेष प्राप्त हुए जो सब पुरावशेष एवं बहुमूल्य कलाकृति, वाराणसी के यहाँ नवम्बर १९९५ से फरवरी १९९६ के मध्य दिगम्बर जैन समाज, काशी , के. ३६/५०-५१ ग्वालदास साहू लेने, बुलानाला, वाराणसी के नाम पर राजिस्टर्ड हैं।

प्रथम मन्दिर का विध्वंश :-

श्री कुबेरनाथ शुक्ल का कहना है कि ई. सन् १०३५ में वाराणसी को श्री नियालितिगिन ने लूटा यद्यपि वो स्वयं इस शहर में कुछ घंटे को ही रूक ldkA og unhdsjKrsvk;k[६] था । यह मन्दिर नदी से दूर था । हो सकता है उस समय राजघाट के जैन मन्दिर को उसने लूटा. हो ।

श्री शुक्ल पुनः कहते हैं कि इसके तुरन्त बाद मुहम्मद गजनवी के भतीजे सालार मसूद का एक शिष्य इसलाम धर्म को फैलाते पश्चिम से बनारस में उस स्थान तक पहुँचा जहाँ अब काशी रेलवे स्टेशन है परन्तु उसे घमासान युद्ध में हारना पड़ा । इस प्रकार इस आक्रमण कर्ता का प्रभाव भी इस मन्दिर पर पड़ने की सम्भावना नहीं है ।

श्री शुक्ल आगे लिखते हैं कि बनारस पर पुनः मुहम्मद गोरी के सेनापति कुतुबुद्दीन ऐबक ने सन् ११९४ में आक्रमण किया व इस बार मुसलमान सेना की विजय हुई [६]। राजघट का किला बरबाद कर दिया गया एवं मुसलमान इतिहासकार लिखंते हैं कि बनारस में१००० मन्दिरों को नष्ट कर दिया गया एवं उसकी सम्पत्ति व बनारस की लूट की संपत्ति १४०० ऊँटों पर लाद कर भेजी गयी ।

इस विवरण से स्पष्ट है कि राजघाट का जैन मन्दिर एवं भेलूपुर का जैन मन्दिर कुतुबुद्दीन ऐबक ने ११९४ ई. में तोड़ा है ।

श्री शुक्ल लिखते है कि बनारस कुतुबुद्दीन के कब्जे से निकल गया एवं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कुतुबुद्दीन ने ई. सन् ११९७ में पुनः बनारस पर आक्रमण किया । वो आगे लिखते हैं कि बनारस के मन्दिर कुछ दशक तक पुनः निर्मित नहीं हो पाये क्योंकि मुसलमान अधिकारी इस बार मन्दिर न बनने देने के लिए कटिबद्ध थे। इसी बीच ई. सन् १२३६ से १२४० में रजिया मसजिद बनी। तत्पश्चात् मुसलमान अधिकारी कुछ नर्म पड़े व बनारस के मन्दिर अपने पुराने स्थान पर बनने लगे [७]।

इस प्रकार स्पष्ट है कि यह मन्दिर १३ वी शताब्दी में सन् १२४० ई. के बाद किसी समय पुनः निर्मित हुआ । निश्चय नहीं कि इस समय राजघाट का जैन मन्दिर छोड़ कर भेलूपुरा मन्दिर, पार्श्वनाथ स्वामी की जन्मस्थली होने से पुनः निर्मित हुआ अथवा किला क्षेत्र में मुसलमान गर्वनर का अधिक आतंक [८] होने से वहाँ का मन्दिर पुनः निर्भित नहीं हुआ । इस पुनः निर्मित मन्दिर का स्वरूप तो पूर्ववत था परन्तु वहाँ की वेदियों एवं मूर्तियों का अनुमान इन पुरावशेषों से नहीं मिल सकता । इस विध्वंस के बाद की व दूसरे विध्वंश से पहली मूर्तियाँ अब भी भेलूपुर में पूजा में हैं। जो मूर्तियां पूजा में आज हैं उनके लेखों का अध्ययन होने से कुछ अनुमान लग सकेगा कि तेरहवीं शताब्दी में कौन मूर्तियां पूजा में रखी गईं ।

दूसरा विध्वंस :-

श्री कुबेरनाथ शुक्ल का कहना है कि ई. सन् १४९४ से १४९६ में सिकन्दर लोदी ने पुनः बनारस के मन्दिरो को तोड़ दिया । वो सब मन्दिर लगभग ९० वर्ष तक बरबाद रहे। ९० वर्ष बाद ही उन मन्दिरों का पुनः निर्माण हुआ [९]। इस प्रकार स्पष्ट है कि १४९४ से १४९६ में यह मन्दिर पुनः ध्वस्त हुआ । भारत के दिगम्बर जैन तीर्थ पुस्तक में स्यादवाद महाविद्यालय के अकलंक पुस्तकालय के एक हस्तलिखित ग्रन्थ जिसका नाम सामायिक नित्य प्रतिक्रमण पाठ है का सन्दर्भ दे कर यह बतलाया कि ई. सन १५६२ में भेलूपुर में पार्श्वनाथ मंदिर विद्यमान था[१०] । पुनः बनारसी दास प्रसिद्ध हिन्दी जैन कवि की लिखी आत्मकथा अर्धकथानक - के संदर्भ से बताया है कि उनका जन्म वर्ष १५९६ में हुआ ६ या ७ माह के बालक को ही बनारस में श्री पार्श्व प्रभू के चरणों

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

में रखा गया व यहाँ के पुजारी के कहने पर इनका नाम बनारसी दास रखा गया [११] । उपरोक्त वर्णन से यह लगता है कि यह पार्श्व भेलूपुर के ही होगें। स्पष्ट है भेलूपुर मन्दिर १४६४ से १४६६ ई में टुटा व ई. १५६२ से पहले बनकर पुनः तैयार हुआ । हो सकता है यह मन्दिर अन्य हिन्दू मन्दिरों से पहले बन गया हो।

इस मन्दिर का स्वरूप चित्र १ से ५ में दिखाया गया है । यही वह मन्दिर है जो वर्ष १६८६ ई. में तोड़ा गया । अबकी बार तोड़नें के बाद में एक यह विशाल मन्दिर निर्मित किया गया ।

भेलूपुर का दूसरा मन्दिर :

भेलूपुर में इस मन्दिर के बराबर में दूसरा जैन मन्दिर मौजूद है जो शीघ्र ही तोड़ा जा रहा है, क्योंकि वहाँ विशाल श्वेताम्बर जैन मन्दिर बन गया है। उसकी वेदी का चित्र जो भारत के दिगम्बर जैन तीर्थ भाग १ से लिया गया ई. सन् १६७१ का चित्र २१ पर है । ई. सन् १६८८ के फैसले से पूर्व पिछले २०० वर्ष श्वेताम्बर दिगम्बर मुकदमे इन दोनों मन्दिरों के सम्बन्ध में हो रहे थे। । कब व कैसे यह दूसरा मन्दिर बना इन मुकदमों के क्या बिन्दु थे , यह अलग से अध्ययन का विषय है। जिस मन्दिर का यह इतिहास है उसकी व्यस्था के स्वरूप के विषय में भी इन मुकदमों के अध्ययन से कुछ प्रमाण मिल सकेगा ।

स्तूप की सम्भावना :

खुदाई में गोलाकार नीव, मध्य से चली हुई किरणों के समान नीवें अथवा चौखम्भा स्तूप की नीवें नहीं मिली है जिन्हें कहा जा सकता कि ये स्तूप की नीवें हैं । स्पष्ट है कि अगर स्तूप वहाँ था तो मन्दिर के प्रथम निर्माण से पूर्व उसकी नीवें हटा दी गयी। निम्न स्थितियाँ स्तूप की सम्भावना व्यक्त करती हैं -

१- पार्श्वनाथ का जन्म ६वीं शदी ईसा पूर्व में हुआ । उस समया स्मृति संजोने हेतु एवं स्थान को चिन्हित करने का साधन स्तूप बनाना ही था ।

२- षटखड़ागम् पुस्तक एक की प्रस्तावना में पंडित हीरालाल जैन ईन्द्रनंदी के श्रुतावतार का सन्दर्भ देते हुए कहा कि आचार्य अर्हद्वली ने एकत्व और अपनत्व भावना से धर्मवात्शलय एवं धर्म प्रभावना बढ़ाने हेतु भिन्न-भिन्न संघ स्थापित किये जिसमें एक पंचस्तूप संघ भी था [१२] । नन्दी अमानाय की पट्टावली का संदर्भ देकर इस प्रस्तावना में अर्हद्वली के आचार्य पद ग्रहण का समय ई. के

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सन् ३८ से १०७ के बीच में बताया है [१३] अर्थात ईसा की पहली शताब्दी में पंचस्तूप संघ का निर्माण हो गया था ।

प्रो. सागरमल ने बटगोहली पहाड़पुर (बंगाल) से प्राप्त ई. सन् ४७९ के एक ताम्र पत्र के हवाले से पंचस्तूपान्वय को काशी का बतायाा है । प्रो. साहब का कहना है कि यह पंचस्तूपान्वय लगभग १० वीं शताब्दी तक अस्तित्व में रहा है ।

यहाँ संघ एवं अन्वय शब्द पर्यायवाची हैं । इससे यह प्रतीत होता है कि काशी में ५ स्तूप ईसा की पहली शताब्दी से पूर्व ही मौजूद थे । इसी कारण यहाँ के संघ को पंचस्तूप के नाम से पुकारा गया ।

३-जिस टीले पर पूर्व मन्दिर स्थापित था उसमें मिट्टी की तीन परतें मिली हैं । सम्भवतः नीचे की परत स्वाभाविक थी । दूसरी परत स्तूप की कुर्सी की हो एवं तीसरी परत स्तूप की ईंटों का चूरा हो । खोंदते समय प्रत्यक्षदर्शी श्री चन्द्रभान एवं श्री जय कृष्ण ने बताया ऊपर की सतह में ईंट वं पत्थर का चूरा था । अन्यथा और कोई कारण तीन परत मिट्टी का प्रतीत नहीं होता। मन्दिर की तीन नीवों से इन तीन परतों का सम्बन्ध नहीं जोड़ा जा सकता।

४- नींव में प्राप्त सभी ईंटे नये मन्दिर में दबा दी गयीं अथवा मिटटी के साथ फेंक दी गयीं परन्तु नमूने के लिए कुछ ईंटें रखी हुई हैं जिनका माप निम्न प्रकार है

१- साबूत ईट २८ गुणे २० गुणे ४.५ से.मी.।

२- लम्बाई में टूटी ईट, मौजूदा लम्बाई २२ से.मी.।

पूरी ईट की माप २२ से. मी. से अधिक गुणें २२ गुणे ७ से. मी.।

३- दशा क्रम दो के अनुकूल, मौजूदा लम्बाई १८ से. मी.।

पूरी ईट की माप १८ से. मी. से अधिक गुणे २२ गुणे ७ से.मी.।

४- दशा क्रम दो के अनुकूल, मौजूदा लम्बाई २२ से.मी.।

पूरी ईट की माप २२ से. मी. से अधिक गुणे २० गुणे ५ से. मी.।

इन ईटो की बनावट सुडौल नहीं है। प्रो. सागरमल ने यहाँ से प्राप्त ईटों को प्राचीन कहा है ।

सम्भव है यहाँ ही ये ५ स्तूप बने हों जो काल क्रम से टूट गये तत्पश्चात यहाँ ये क्रम से चार बार मन्दिर बना ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उपसंहार

जैन धर्म में मन्दिर नवदेवता में स्थान पाते हैं [१५] । इस प्रकार मन्दिर केवल मूर्ति का आवास ही नहीं बल्कि स्वयं एक देवता है। मैं भेलूपुर के इन्हीं देवता की पूजा में रत हूँ एवं उपरोक्त खोज उन्हीं के प्रति मेरे श्रद्धा सुमन हैं ।

अगर कोई आवश्यक घटना का बर्णन उपरोक्त लेख में रह गया हो या कोई घटना गलत लिखी गयी हो तो विज्ञ जन मुझे सूचित कर अनुग्रहीत करें ।

मुझे काफी सूचनायें श्री ऋषभदास जैन, श्री चन्द्रभान जैन ,श्री जय कृष्ण जैन,श्री सुनील जैन,श्री लाल जी जैन नरिया , श्री प्रकाश चन्द्र जैन पुजारी भेलूपुरा ,श्री चन्द्रकान्त मिश्रा प्रबंधक भेलूपुरा से मिली हैं । मैं उन सबका आभारी हूँ । जिन विद्वान लेखकों से मैंने इस विषय में जानकारी हासिल की या जिन्हे ऊपर संदर्भित किया अथवा जिस पुस्तक से मैंने तीन फोटो लीं उन सबका मै आभारी हूँ । लेखक के पिता चौधरी प्रकाश चन्द्र जैन (१०-१-१९१० से ७-१२-१९९०) ने वाराणसी में भेलूपुरा का इतिहास जानना चाहा था उनके आदेश से यह अध्ययन मैंने प्रारम्भ किया था । लेखक की माता जैनमती जैन ने इस कार्य की प्रेरणा दी व धर्म पत्नी इन्द्रानी जैन ने सहयोग दिया, जिनका आभार व्यक्त करना नहीं भूलना चाहिए । इस सब कार्य में प्रो. सागरमल का **संदर्भ लगातार देता रहा हूँ एवं उनसे समय-समय पर प्रेरणा मिली। श्री सुनील जैन ने लगातार लेखन हेतु अनुरोध किया। इनकौ बहुत धन्यवाद ।**

आशा है कि इस वर्णन से पुरावेशषों , पुरानी मूर्तियों , पुराने मन्दिरों, पुराने टीलों के प्रति समाज की रूची जगेगी क्योकि उन्हीं से देवता की गौरव गाथा को निर्माण तथा धर्म के प्रति श्रद्धा का संचार होता है। वह देवता की पूजा है ।

सन्दर्भ :

१- भारत के दिगम्बर जैन तीर्थ भाग १ - प्रकाशक भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी बम्बई,१९७४ पृ.१३३ ।

२- उपरोक्त का पृष्ठ १२९ व १३०।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३- उपरोक्त का पृष्ट १२६।

४- जैन प्रतिमा विज्ञान द्वारा डा. मारूति नन्दन प्रसाद तिवारी, प्रकाशक - पार्श्वनाथ विद्याश्रम शोध संस्थान , वाराणसी, १९८३, पृ.४३।

५- उपरोक्त क्रम १ की पुस्तक का पृ.३७ ।

६- वाराणसी डाउन दी ऐजेज लेखक कुबेर नाथ शुक्ल प्रकाशक प्रो . कामेश्वर नाथ शुक्ला पटना १९७४ पृ.४।

७- उपरोक्त क्रम ६ की पुस्तक का पृ. १७६।

८- उपरोक्त क्रम ६ की पुस्तक का पृ.१८०।

९- उपरोक्त क्रम ६ की पुस्तक का पृ. ५।

१०-उपरोक्त क्रम एक की पुस्तक का पृ. १२९।

११-उपरोक्त क्रम एक की पुस्तक का पृ. १२०।

१२-षटखडागम प्रथम पुस्तक, प्रकाशक श्री मान सेठ लक्ष्मी चन्द्र शिताब राय अमरावती, १९३९ पृ १४।

१३-उपरोक्त क्रम १२ की पुस्तक का पृ.२६,२७,२८,२९,व ३५ ।

१४-पार्श्वनाथ जन्म भूमि मन्दिर वाराणसी का पुरातात्विक वैभव लेखक प्रो. सागरमल जैन सांसकृतिक साधना भाग ३ प्रकाशक्र नेशनल रिसर्च इन्सटीट्यूट आफ हियूमन कलचर, वाराणसी २९९० पृ. ४१।

१५-बाल विकास भाग- २ लेखिका- आर्यिका ज्ञानमती, प्रकाशक दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान, हस्तिनापुर, १९८३, पृ. १६।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org